जहीर कुरेशी की गज़लों में चित्रित नारी विमर्श

प्रा. भेंडेकर एन. एस.
कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय, मंगरुळ.

Publication date. Feb-2019
Vol-VIII Spl. Issue III

वैश्विकरण के कारण वर्तमान जगत में अनेक प्रकार के बदलाव हुये है। जिसका प्रभाव आम जन-जीवन पर पड़ा है। आज व्यक्ति के रहन-सहन, खान-पान, जीवन यापन के तरीके आदि प्रभावित हुये हैं। विज्ञान के द्वारा हमने कई अविष्कार सफलतापुर्वक किये, जिनका सिधा प्रभाव मानव जीवन पर पड़ा है। हमने कई प्रकार की सफलताओं को प्राप्त कर लिया है। आधुनिकता की चकाचौंध हम सभी को खिंच रही है। जिस कारण हम अपना घर, अपना गाँव, अपने लोग छोड़ अपनी किस्मत आजमाने हेतु शहरों की ओर खिंचे चले जा रहे हैं। हम सभी आज जीस दौड़ में जिस गती से दौड रहे हैं, वह दौड हमें कहाँ पर ले जायेगी ? इस दौड़ में हम कई बार हमारे अपनों को पिछे छोड आगे की ओर बढ रहे है। हम इस बात को लगभग भूल बैठे है कि, हमारे अपनों ने हमें खड़ा करने के लिये जिस त्याग, बलिदान और अपनी इच्छाओं को स्वाह किया उनके प्रति भी हमारा कोई कर्तव्य है।

आज आधुनिकता के चलते हमारे भौतिक जगत में तो बदलाव आये किंतु मनोजगत...? हमारे दकियानुसी संस्कार जो भेद-भाव की खाई को कम करणे के स्थान पर और बढ़ाते है। जिसके चलते आज भी स्त्री समानता की अधिकारीनी होने के बावजूद भी दमनचक्र की चक्की में पिसती हुई नजर आती है। आज भी हमारा मनोजगत बेटी को स्वीकार नहीं करता। बेटे की चाहत में जगत में आने से पुर्व ही कई स्त्रीयों को भ्रूण में ही समाप्त किया जाता है। जहीर कुरेशी जी इसी प्रकार की स्थितियों को अपनी गजल 'लिंग निर्धारण समस्या हो गई' में कुछ इस प्रकार स्पष्ट करते हैं,

"लिंग निर्धारण समस्या हो गई,
कोख में ही कत्ल कन्या हो गई।"[५]

एक ओर वैश्विकरण ने सभी को करीब ला खड़ा किया। हजारों मिलों की दुरियों को समाप्त किया किन्तु हम आज भी अपने जीवन में स्त्री दुय्यम स्थान देते हैं। पती पत्नी के संबंधों में अक्सर ऐसे प्रसंगों को देखा जा सकता है। महत्वपूर्ण कार्य, पारिवारिक जीवन के फैसलें, विचार-विमर्श करते समय पत्नी के विचारों को या उसके निर्णय को हम उतनी अहमियत नहीं देते। कई बार तो हमारा बर्ताव ऐसा हो जाता, जसै कि हमारे जीवन में उसका कोई महत्व ही न हो। ऐसी स्थितियों में उस स्त्री की मानसिकता का हम जरा भी विचार नही करते कि, उसपर क्या बीतती होगी ? वह कैसा महसुस करती होगी? एक पत्नी की मानसिकता का चित्रण करते हुये कुरेशी जी एक स्थान पर लिखते हैं,

"वो ऐसा व्यवहार न जाने क्यों करता है पत्नी से,
जैसे उस औरत का उसके जीवन में स्थान नही।"[५५]

वैश्विकरण के इस दौर में हम आधुनिकता के रंग में इतने रंग गये हैं कि, कई बार हम, उचितानुचित विवेक से परे चले जाते है। जिस सभ्यता और संस्कृति ने हमें जगत में एक ऐसा स्थान दिलाया, जिसका अनुकरण विदेशी भी करते है किंतु कई बार हम उसी को भूल बैठते हैं। वर्तमान में स्त्री-पुरूष जीवन पर इस अरार को आसानी से देखा जा सकता है। पुरूष प्रधान संस्कृति के चलते कई

Scanned by CamScanner

बार स्त्रीयों के प्रति जो हमारी मानसीकता है, वह निम्न होती है। हम अपने घर–परिवार में जीस प्रकार आचरण करते हैं, ठिक उसी प्रकार घर से बाहर हमारी नजरे या मानसिकता वैसी रह नही पाती। इस प्रकार चेहरे बदलते लोगों की स्त्री के प्रति इस प्रकार की मानसीकता को ग़ज़लकार इस प्रकार स्पष्ट करते है,

"एक से काम चलता न था,
उनके चेहरों पे चेहरे हुए।"[पपप]

इक्कीसवीं सदी में हमने अनेक नुत–नऐ अविष्कारों को सफलतापूर्वक पुर्ण किया। जिसके चलते मानव जीवन कठिणाईयाँ कम हुई। यातायात के साधन, विवध प्रकार के संसाधान, संचार की सुविधाएँ आदि के कारण हमारी नजदिकिया बढ़ गयी, अपितु स्त्री के प्रति पुरूषी मानसीकता में जिस अनुपात में परिवर्तन होना जरूरी था, वह नही हो पाया। इसका अर्थ यही है कि, हमने भौतिक सुख–सुविधाओं को तो अपनाया पर हमारा मनोजगत उसी पुराने दकियानुसी विचारों तथा मानसीकता से भरा पडा है। जिसके चलते हम आज भी स्त्री को कई बार संदेह की नजर से देखते हैं। अकेली स्त्री का घर से बाहर जाना या किसी से बातें करना हमारे मन में संदेह का बीजारोपन करते. हैं। इस संदेह की बीमारी के चलते कई परिवार टुटकर बिखर गये, कई स्त्रीयों को अपने जीवन में संदेह का शिकार होना पड़ा। इस संदेह के ही कारन हम अपने हसते–खेलते परिवार में स्वयं ही आग लगाते है। इस प्रकार की स्त्री के प्रति पुरूषी मानसिकता को 'वो स्वयं से मिला–जुला ही नहीं' इस ग़ज़ल में इस प्रकार से प्रकट करते हैं,

"उसको 'सन्देह' की है बीमारी,
और 'सन्देह' की दवा ही नहीं।"[पअ]

जिस प्राकर वर्तमान में हमने उन्नती की है, हमारे खान–पान, आचार–विचार, रहन–सहन आदि मानव जीवन के कई पहलुओं में यकिनन परिवर्तन आये हैं। इन परिर्वनों के कारण हमारा जीवन–मान सुधर तो गया किंतु जब भी स्त्रीयों का प्रश्न आता है तो हमारी मानसीकता, हमारी सोच के सम्मुख एक प्रश्न चिन्ह लग जाता है। चाहे वह शादी ब्याह का प्रसंग हो या पारिवारिक। चरित्र को लेकर हम इतने सचेत रहते हैं कि, इसमें हम किसी भी प्रकार से कोई समझौता नहीं करते। जिन स्त्रयों के चरित्र के आगे प्रश्न चिन्ह लग जाते हैं, उन स्त्रियों के चरित्र का हनन करने वाला भी हममें से कोई एक होगा यह नहीं सोचते। हमें अनेकों के साथ संबंध बनाने की खुली छूट पर हमारे जीवन का साथी बेदाग हो। इसी प्रकार की स्त्रीयों के प्रति पुरूषी मानसिकता को ग़ज़लकार इस प्रकार व्यक्त करते हैं,

"रूप लुटता था, रूप लुटता है,
लहु का सिलसिला पुराना है।
औरतों के चरित्र को लेकर,
मर्द का सोचना पुराना है।"[अ]

इस प्रकार की सोच यहीं पर खत्म नहीं होती। समाज में कई ऐसी विकृत प्रवृत्तीयाँ है, जिनके चलते स्त्रीयों को घर से बाहर अकेले निकला किसी खतरे से खाली नही। क्यों कि समाज में पनपती. विकृति के चलते कई मासुमों को कुचला जाता, रौंदा जाता है। उनका जिवन तहस–नहस किया जाता है। यहीं नही बल्कि कई नारियों को जीवन समाप्त भी हो चुका है। दिल्ली में घटित 'निर्भया' कांड या

Scanned by CamScanner

'भंवरीदेवी' मामला इसी प्रकार की विकृत मानसिकता को प्रकट करता है। समाज में घटित ऐसी घटनाओं के कारण स्त्री आज भी भयभीत है। स्त्रीयों के प्रति जो हमारी सोचने की मानसिकता है, देखने का जो दृष्टिकोण है, उसमें परिर्वतन की आवश्यकता है। जिस कारण स्त्रियाँ समाज में बेखौफ तथा निड़र होकर निकल सके। बस स्टॅड, रेल्वे स्टेश्न, भीड़–भाड़ वाले इलाके हो या सुनसान गलियाँ अकेली स्त्री खुँखार नजरों से बच नहीं पाती, वह पुरूषी वहशी पन का शिकार बनती है। ऐसी ही भयावह स्थितियों का अंकन ग़ज़लकार 'दिन–ब–दिन घाव गहरे हुऐ' में इस प्रकार करते हैं;

"कली के प्यार मं मर–मिटने वाले,
कली को फेंक देते हैं मसलकर।"[अप]

आधुनिकता के कारण जो बदलाव हुये और जीन बदलावों को मानव जीवन में अपनाया गया वह हमारी पुरतन आदर्श संस्कृति पिछे छोड़ता गया। आज परिवार की संकल्पना में बदलाव आये है। संयुक्त परिवार के स्थान पर छोटे तथा स्वतंत्र परिवार निर्माण हुये। शहरों की चकाचौंध और दिखवे की ललक ने हमे इस प्रकार प्रभावित किया की हम स्वयं अपनी हैसियत से बढ़कर स्वयं को दिखाने का प्रयास करते हैं। हर कोई किसी न किसी प्रकार की दौड़ में लगा हुआ है। जिस कारण पती–पत्नी एक दुसरे के लिये समय नहीं दे पाते। हर काई अपने आप में व्यस्त है। जिस कारण परिवार के अन्य सदस्य जैसे बेटा, बिटिया अपने आपको अकेला महसुसे तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नही। शहरो की चमक–धमक तथा संस्कृति का आकर्षण इस प्रकार बढ़ चुका है कि आज एक माँ अपने बच्चों के लिये समय भी नहीं दे पाती। क्यों कि उसने अपने आप को इस कदर व्यस्त कर लिया है कि, कई बार बच्चे अपनी माँ का 'कल्ब' से लौटने का इंतजार करते करते सो जाते है। इसी प्रकार स्त्री जीवन में आए हुये बदलावों रचनाकार अपनी ग़ज़ल में इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं,

"बेटी को 'क्लब' से लौटती माँ का इंतजार,
बारह बज रहा है ग़ज़र, नींदी के लिए।
इस बीसवीं सदीं में कहाँ खो गई है नींद,
लंबी है जागने की उमर, नींद के लिए।"[अपप]

अंततः हम वैश्विकता के फलस्वरूप मानव जीवन के जीन पहलुओं पर प्रभाव पड़ हैं वह यकिनन हमारे भौतिक विकास के लिये लाभदायक है। पर, जहाँ तक स्त्री–पुरूष संबंधें की बात की जाये तो यहीं कहना पड़ता है कि, हमने आधुनिकता को स्वीकार किया किंतु स्त्री के प्रति हामारी मानसिकता को हम आज भी बदल नहीं पाये। परिणामतः आज भी स्त्री स्वयं को अकेला महसुसती है। कभी कभी तो उसे अपना ही घर पराया लगने लगता है, तो कभी वह अपने ही सपनों में स्वयं का पिछा करते हुये भागती नजर आती आहे। एक ही पल में स्वयं को निर्वासीत महसुस करने वाली स्त्री के प्रति जब तक हमारे मनोजगत में उसके लिये एक ठोस आधरभूमि तैयार नही होती, तब तक वह किसी न किसी दरसता, अन्याय–अत्याचार की शिकार बनती ही जायेगी। इसलीये उसे भी अपना कृतत्व सिद्ध करने के अवसर हमे प्रदान करने होंगे, जिससे पारिवारिक–सामाजिक एकता बनी रहे। नही तो, वह अपनी राह स्वयं चुनने के लिय सक्षम है।

Scanned by CamScanner

संदर्भः–

[i] Kavitakosh/kk/org/ भीड में सबसे अलग–ग़ज़ल संग्रह/लिंग निर्धारण समस्या हो गई, जहीर कुरेशी

[ii] Kavitakosh/kk/org/ समंदर ब्याहने आया नहीं है–ग़ज़ल संग्रह/वो ऐसा व्यवहार न जाने क्यों करता है पत्नी से, जहीर कुरेशी

[iii] Kavitakosh/kk/org/ भीड में सबसे अलग–ग़ज़ल संग्रह/दिन–ब–दिन घाव गहरे हुऐ, जहीर कुरेशी

[iv] एक टुकड़ा धूप और चांदनी का दुःख–जहीर कुरेशी/वो स्वयं से मिला–जुला ही नही. विद्या प्रकाशन, कानपुर सं. द्वितीय 2016 पृ. 95

[v] एक टुकड़ा धूप और चांदनी का दुःख–जहीर कुरेशी/रूढ़ियों का कला पुराना है–विद्या प्रकाशन, कानपुर सं. द्वितीय 2016 पृ. 93

[vi] Kavitakosh/kk/org/ पेड़ तनकर भी नहीं टूटा–ग़ज़ल संग्रह,/अंधेरे की सुरंगों से निकल कर, जहीर कुरेशी

[vii] एक टुकड़ा धूप और चांदनी का दुःख–जहीर कुरेशी/घिरता है शाम होते ही डर, नींद के लिए–विद्या प्रकाशन, कानपुर सं. द्वितीय 2016 पृ. 83

Scanned by CamScanner